International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 12 Issue 1 January. 2023 || PP. 163-169

''अफ्रीकी राज्यों की समस्यायें''

डॉ. रामकल्याण मीना
सह आचार्य राजनीति विज्ञान
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
झालावाड़(राज.)

सरांश *–एशियाके बाद अफ्रीका सबसे बड़ा महाद्वीप है। अफ्रीका एक अल्पविकसित निर्धन महाद्वीप है इसे प्रायः अन्ध महाद्वीप के रूप में जाना जाता है। यद्यपि अफ्रीका की खनिज दौलत इतनी अधिक है कि उसकी किसी देश के साथ तुलना नहीं की जा सकती। आजादी के बाद इन देशों में जो राजनीतिक चित्र उभरा है तदनुसार केवल 7 देशों में विपक्षी दलों का अस्तित्व है। 17 देशों में एक दलीय शासन व्यवस्था है तथा 17 फौजी शासन के अन्तर्गत है। 1960 से 1985 के प्रारम्भ तक 90 सैनिक क्रान्तियों को झेलने वाले इस महाद्वीप में पिछले वर्षों में छः सैनिक विद्रोह हुए। अफ्रीकी समाज में भावात्मक एकता की चेतना का अभाव, परिणामस्वरूप उत्पन्न आपसी राजनीतिक कलह, आर्थिक मजबूरिया एवं विश्व राजनीति की शतरंजी चाल के प्रति अफ्रीकी राजनेताओं की नासमझी के कारण बड़ी ताकतों ने इन देशों में अपने अखाड़े स्थापित कर लिये।*

मुख्य शब्द *–अल्पविकसित, अन्ध महाद्वीप, गृहयुद्ध, कबीले, जनजातियाँ, साम्यवाद, पितृसत्तावाद आदि।*

एशिया के बाद अफ्रीका सबसे बड़ा महाद्वीप है। यह विश्व के भू–क्षेत्र का 1/5 भाग है। इसका 80 प्रतिशत क्षेत्र उष्ण कटिबन्धी है। इसमें विश्व के 10 प्रतिशत लोग रहते है जिसमें 50 लाख यूरोपीय श्वेत जाति के लोग है, तथा 5 लाख एशिया के काले लोग है इसकी कुल जनसंख्या 24 करोड़ के लगभग है। इसकी राजनीतिक शक्ति, अच्छी भूमि और व्यापार पर यूरोपीय लोगो का नियंत्रण रहा है। ऐशिया के लोग प्रायः छोटे व्यापारी अथवा श्रमिक रहे है अफ्रीकावासी अपने ही देश में दास रहे है। अफ्रीका के क्षेत्रों का पारस्परिक संबंध भी प्रायः न्यून रहा है। जैसे अफ्रीका के अरब राष्ट्रों का विशेषकर मिस्र, अल्जीरिया, लीबिया, ट्यूनिशिया और मोरक्को आदि का जिन्हें प्रायः श्वेत अफ्रीका की संज्ञा दी जाती है, 'अश्वेत अफ्रीका' से (नीग्रो जातियों से) बहुत कम संबंध रहा है।[1]

अफ्रीका एक अल्पविकसित निर्धन महाद्वीप है। इसे प्रायः अन्ध महाद्वीप के रूप में जाना जाता है इसका कारण यह है कि अफ्रीका तथा उसके इतिहास के संबंध में बहुत कम जानकारी प्राप्त है। यह शताब्दियों से उपनिवेशी आधिपत्य का शिकार रहा है। यह कभी ग्रीक और रोमन साम्राज्य से पीड़ित रहा है, कभी इस्लाम और ईसाइयत से और पिछली चार पांच शताब्दियों से पश्चिमी यूरोप की शक्तियों से जैसे ब्रिटेन, फ्रांस, बेल्जियम, पुर्तगाल, स्पेन आदि से पीड़ित रहा है। इन साम्राज्यवादी शक्तियों ने अफ्रीका के राजनीतिक, शोषण के साथ–साथ आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृति शोषणभीकिया है। इन्होंने अफ्रीकावासियों को दरिद्रता, अनभिज्ञता और रोग की व्यवस्था में निरन्तर बनाये रखा है।

यद्यपि अफ्रीका की खनिज दौलत इतनी अधिक है कि उसकी किसी देश के साथ तुलना नहीं की जा सकती। अफ्रीका में पूँजीवादी विश्व में उत्पन्न होने वाल हीरों का 90 प्रतिशत, कोबाल्ट का 80 प्रतिशत, प्लैटिनम का 62 प्रतिशत, सोने का 70 प्रतिशत, मैगनीशियम और क्रोमियम का 50 प्रतिशत, मैगनीज का 36 प्रतिशत और तांबे का 27 प्रतिशत उत्पादन होता है। खाद्यान्न और कच्चे माल के उत्पादन में भी अफ्रीका की दौलत अत्यधिक है। यहाँ खजूर तेल का 70 प्रतिशत, रेशा 75 प्रतिशत, नारियल 75 प्रतिशत, अकरकरा 100 प्रतिशत पैदा होता है। कांगो क्षेत्र में रेडियम के भण्डार भी उपलब्ध है। अफ्रीका में उच्च श्रेणी के कच्चे लोहे के भण्डार इतने अधिक है कि वह विश्व की आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है।[2]

अफ्रीका महाद्वीप में स्वतंत्रता के सूर्य का उदय द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की सम्भवतः सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और निराली घटना है। टामम्बोया के शब्दों में ''विदेशी आधिपत्य द्वारा आरोपित अंधेरे और औपनिवेशिक शासन की जेल की कोठरियों से अफ्रीका और अफ्रीकी लोगों का अम्युदय समकालीन विश्व स्थिति का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य है।''[3]

1936 में इटली ने अफ्रीका के अंतिम स्वाधीन राज्य अबीसीनिया की स्वतंत्रता का अन्त कर दिया। अबीसीनिया की विजय के बाद अफ्रीका में स्वतंत्रता और राष्ट्रीयता का आन्दोलन प्रबल हुआ। यह नारा दिया गया कि ''अफ्रीका अफ्रीकावासियों का हो।'' द्वितीय विश्व युद्ध के बाद इसके विविध प्रदेश तेजी से स्वतंत्र होने लगे। द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति पर 1947 में इस महाद्वीप में केवल चार राज्य स्वतंत्र थे अबीसीनिया, लाईबीरिया, दक्षिण अफ्रीका का यूनियन तथा मिस्र। 24 दिसम्बर 1957 में लीबिया स्वतंत्र हुआ। 1 जनवरी 1954 को सूडान स्वाधीन गण राज्य बना। 1956 में फ्रांस ने मोरक्को को स्वतंत्र कर दिया। सन् 1960 में अफ्रीका के 16 देश स्वतंत्र हुए। 27 अप्रैल 1961 को ब्रिटिश

उपनिवेश सियरा लियोन स्वतंत्र हुआ। 18 अप्रैल 1980 को द. रोडेशिया ''जिम्बाब्वे'' के नाम से स्वतंत्र हुआ। अफ्रीका से स्वतंत्रता प्राप्त करने वाला यह 50 वाँ देश था। 21 मार्च 1990 को नामीबिया स्वतंत्र हो गया। अफ्रीका महाद्वीप में लगभग 53 देश है इनमें 6 राष्ट्र अफ्रीका महाद्वीप स्थित होते हुए भी एशिया के सीमावर्ती होने के कारण राजनीतिक व सांस्कृतिक कारणों से अरब देशों से जुड़े है। अतः मोरक्को, अल्जीरिया, ट्यूनीशिया, लीबिया व मिस्र अपने को अरब कहलाना, अधिक पसन्द करते है।[4]

आजादी के बाद इन देशों में जो राजनीतिक चित्र उभरा है तदनुसार केवल 7 देशों में विपक्षी दलो का अस्तित्व है। 17 राज्यों में एक दलीय शासन व्यवस्था है तथा 17 फौजी शासन के अन्तर्गत है। पिछले 25 वर्षों में 70 राजनेता किंवा शासनाध्यक्षों की हत्या कर उन्हें सत्ताच्युत किया गया। 1960 से 1985 के प्रारम्भ तक 90 सैनिक क्रान्तियों को झेलने वाले इस महाद्वीप में पिछले वर्षों में छः सैनिक विद्रोह हुए– तीन सफल और तीन असफल।[5]

यद्यपि 25 मई 1962 को 30 अफ्रीकी देशों ने अदिस अबाबा सम्मेलन में ''अफ्रीकी एकता संगठन'' की स्थापना के घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किए। वही इस संगठन का मुख्यालय भी है। अफ्रीकी देशों के बीच एकता और सहयोग बढ़ाना, उपनिवेशवाद को समाप्त करना तथा अन्य देशों की स्वाधीनता की रक्षा के लिए कार्य करना संगठन का मुख्य उद्देश्य है।[6]

अफ्रीकी राज्यों की समस्याएँ–

राजनीतिक स्थायित्व की समस्या –यह समस्या इन देशो में प्रमुख है। असन्तुष्ट दल तथा व्यक्ति हमेशा स्थायित्व सरकार के स्थायित्व के लिए खतरा बने रहते है। अधिकांश देशों में लोकतंत्र की जड़े मजबूत नहीं हो पायी है तथा निरन्तर गृहयुद्ध चलते रहते है। अधिकांश देशों में अधिनायकवादी सरकारे है तथा जनता का शोषण स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भी समाप्त नहीं हुआ है। जिन देशों में लोकतंत्र की स्थापना की गई है वहाँ भी एकतंत्र की ही स्थापना हो सकी है। इन परिस्थितियों में विदेशी हस्तक्षेत्र की संभावना भी निरन्तर बनी रहती है।[7]

असन्तुष्ट नेता समूह अथवा कबीले स्वयं या विदेशी शक्तियों से प्रोत्साहन पाकर राजनीतिक अस्थिरता अथवा विद्रोह की स्थितियाँ पैदा करते रहते है। यही कारण है कि अफ्रीका के नव स्वतंत्र राज्यों में राजनीतिक हत्याओं, आन्तरिक विद्रोहो, राज्य विप्लव एवं जातीय युद्धों की घटनाएँ प्रायः होती रही है– जैसे (काँगो) जेयरे स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से (1960) ही गृहयुद्ध की अग्नि में झुलसने लगा। जेयरे (काँगों) का शाबा (कटांगा) प्रान्त विद्रोहियों का गढ़ रहा है। जेयरे (काँगों) में मोबुत सेसे सीको के स्थान पर क्रांतिकारी नेता लारेन्ट डिजायरी कबीला की सरकार बनी। अंगोला गृह युद्ध की अग्नि में झुलसता रहा है। चैड विद्रोहियों के प्रहार का शिकार रहा है। इथियोपिया अपनी अखण्डता के लिए चिन्तित है। सोमालिया और इथियोपिया एक दूसरे के शत्रु रहे है और ओगादान क्षेत्र में दोनो युद्ध लड़ चुके है। रवांडा वर्ष 1990 से 'हुतु' और 'तुत्सी' जनजातियों के जातीय युद्ध में झुलस रहा है। जातीय युद्ध अफ्रीकी देशों की नयिति बन गयी है।

व्यापक राजनीतिक संगठनों का अभाव –अफ्रीका के नव स्वतंत्र राज्यों में व्यापक राजनीतिक संगठनों का अभाव है। इन राज्यों में लम्बी परम्पराओ एवं सुदृढ़ राजनीतिक संगठन वाली कोई राष्ट्रव्यापी पार्टियाँ नहीं है जो जन समुदाय में विद्यमान सभी समूहों, वर्गों एवं हितों को अपने संगठन में शामिल करके उन सभी का प्रतिनिधित्व कर सकती और राष्ट्रीय विषयों पर सामान्य नीति अपनाकर उन्हें सामूहिक कार्यवाही के लिए प्रेरित कर सकती। इसका परिणाम यह हुआ कि अफ्रीका में चुनाव सुधारों और मताधिकार के विस्तार के साथ अफ्रीकी पार्टियाँ सत्ता में तो आ गयी परन्तु उन्हें वह राजनीतिक और प्रशासनिक अनुभव प्राप्त नहीं हो सका जो स्वतंत्र राष्ट्र की सरकार को चलाने के लिए आवश्यक था।[8]

गोरे–काले की समस्या –इस समस्या का उदय यूरोपीय शक्तियों द्वारा किया गया है। उनके शासनकाल में यहां श्वेत लोग आकर बसे तथा प्रशासन एवं उच्च स्तरीय कार्य इन्हीं के हाथों में था। ये शासक थे। अतः स्थानीय निवासियों पर मनमाना अत्याचार करते तथा उनको दास समझते थे। यह क्रम उस समय तक चलता रहा जब तक उनका शासन था यद्यपि अनेक बार इसका विरोध किया गया। किन्तु यूरोपीय अपनी जातीय उच्चता की भावना के कारण स्थानीय जनता का शोषण करते रहे। आज जबकि यहां के देश स्वतंत्र है फिर भी जहां विदेशी है वहां यह समस्या वर्तमान है। इसके अतिरिक्त, यहां अनेक आदिवासी जातियां निवास करती है। उनका तथा शेष अफ्रीकियों में सामंजस्य करना इनके विकास के लिए अति आवश्यक है। यह समस्या द. रोडेशिया दक्षिण अफ्रीका में उग्र रूप धारण कर चुकी है तथा यहां संघर्ष होता रहता है।[9]

अफ्रीकी एकता की समस्या –अफ्रीका आज विघटन के कगार पर खड़ा है। अफ्रीकी एकता संगठन अपने एकता प्रयासों में पूर्णतया असफल रहा है। डॉ. एन्क्रूमा का ''अफ्रीका का राज्य'' का सपना टूट चुका है क्योंकि विघटनकारी शक्तियां बहुत व्यापक एवं सक्रिय है। दक्षिण अफ्रीका की राजनीति अभी अफ्रीकी एकता के मार्ग में रूकावट बनी हुई है।

पश्चिमी देशों की साजिश –अफ्रीकी मामलों के जानकार ये भी संदेह जताते है कि महाद्वीप पर दिखता अंदरूनी संघर्ष असल में इंटरनेशनल स्तर की साजिश है ताकि वहां के कच्चे माल और मैनपावर का पूरा फायदा पश्चिम

ले सके। जर्नल ऑफ मॉडर्न अफ्रीकन स्टडीज के आर्टिकल में सिलसिलेवार ढंग से ये दावा किया गया कि अफ्रीका में चल रही सिर्फ 30 प्रतिशत लड़ाई ही आपसी है जबकि बाकी 70 प्रतिशत इंटरनेशनल देन है। कही न कही इस बात में सच्चाई भी लगती है। अफ्रीका के कांगों में इतनी बड़ी लड़ाई चली, लाखों लोग मारे गए, लेकिन इंटरनेशनल लेवल पर इसकी खास बात नहीं हुई। इसे एक गरीब देश की आपसी चिल्लपों की तरह ट्रीट किया गया। ये वैसा ही है जैसे इंसानोंकी मौत पर हंगामा हो जाता है जबकि फैक्ट्री में प्रयोग के दौरान लाखों पशु मरते है और कानो कान खबर तक नहीं। अंदेशा जताया जाता है कि अफ्रीकी आबादी को भी कुछ इसी स्तर पर देखा गया।

वर्तमान में रूस–यूक्रेन युद्ध पर बहुत बात हो रही है। दुनिया के छोटे–बड़े सारे देश किसी न किसी तरह लड़ाई में जुट चुके है कोई यूक्रेन को बचाने की बात करता है तो कोई जंग रोकने की, वही दूसरी तरह अफ्रीका के सूडान या अल्जीरिया में चल रही लड़ाई का कोई जिक्र नहीं होता या फिर इथियोपिया और केमरून के लिए कोई खुलकर खड़ा नहीं हो रहा। वही चीन से लेकर अमेरीका तक अफ्रीका में भारी निवेश कर रहे है। कई देश अफ्रीकी देशों के साथ नया ही खेल कर रहे है जैसे, ब्रिटेन ने एक करार करके अपने यहां आए शरणार्थियों को अफ्रीका भेजना शुरू कर दिया। बदले में वो उन्हें नियत रकम देगा। हालांकि आशंका जताई जा रही है कि इससे पहले ही लड़ाई में उलझे देश और बदहाल हो जाऐंगे।

विदेशी आर्थिक सहायता पर निर्भरता –अफ्रीका के नव स्वतंत्र राज्य विदेशी आर्थिक सहायता पर निर्भर करते है। आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए है। वे अल्पविकसित है। आर्थिक विकास के लिए उनके पास राष्ट्रीय स्रोतों एवं आधुनिक टेक्नोलॉजी की कमी है। अधिकांश क्षेत्रों में उनकी अर्थव्यवस्था उपनिवेशी नमूने पर आधारित है जिस पर विदेशी कम्पनियों का एकाधिकार है। कृषि और उद्योग में सामंजस्य न होने के कारण इन देशों में दरिद्रता एवं बेरोजगारी अधिक है। अफ्रीकी देश अधिकांशतः कच्चा माल ही पैदा करते है। उनकी अर्थव्यवस्था उनके निर्यात पर निर्भर करती है जो मांग और पूर्ति के नियमों द्वारा निर्धारित होती है। अधिकांश अफ्रीकी राज्यों के पास केवल निर्यात ही आय का एकमात्र स्रोत है। वे आय के अन्य आन्तरिक स्रोतो को उत्पन्न करने में असमर्थ है। कुछ राज्य तो अपने खर्चे को चलाने के लिए भी विदेशी आर्थिक सहायता पर निर्भर करते है। यह एक तत्व ही अफ्रीका में ''नव उपनिवेशवाद'' को निमंत्रण देता है। फ्रेंच अफ्रीकी राज्यों ने स्वतंत्र होने के बाद भी फ्रांसीसी प्रभाव क्षेत्र में ही रहना पसन्द किया। रोम की संधि पर टिप्पणी करते हुए घाना के भूतपूर्व राष्ट्रपति क्वामे एन्क्रूमा ने 30 मई 1961 को कहा था ''इस संधि में फ्रेंच अफ्रीकी राज्यों को यूरोपीय आर्थिक समुदाय में सह–स्तर'' प्रदान किया गया था कि जहां ''1885 की बर्लिन की संधि ने अफ्रीका में उपनिवेशवाद के प्रभुत्व को निर्विवाद रूप से स्थापित कर दिया था वहां रोम संधि अफ्रीका में नव उपनिवेशवाद के आगमन का संकेत देती है।''[10]

कुशल राश्ट्रीय नौकरशाही का अभाव –अफ्रीका के नव स्वतंत्रराज्य कुशल राष्ट्रीय नौकरशाही के अभाव से पीड़ित है। उपनिवेशी शासनकाल में शिक्षा का विस्तार न होने के कारण स्वतंत्रता प्राप्ति के समय इन राज्यों के पास कोई कुशल एवं अनुभवी तथा राष्ट्रीय भावनाओं से ओत प्रोत नौकरशाही नहीं थी जो प्रशासन के कार्य को सुचारू रूप से सम्भाल सकती। इसका परिणाम यह हुआ कि इन राज्यों को बाह्य होकर प्रवासी स्टाफ को बनाये रखना पड़ा। राजनीतिक सत्ता अफ्रीकावासियों के हाथो में होने पर भी प्रशासनिक सेवाओं में उपनिवेशी स्टाफ बना रहा। जिसे राष्ट्र के निर्माण की योजनाओं और उनकी कार्यान्विती में कोई रूचि नहीं थी। आज तक अफ्रीका में एक पेशेवर मध्य वर्ग का विकास नहीं हो सका है।

विदेशियों की उपस्थिति –अफ्रीकी देशो में वर्तमान समय में विदेशी अर्थात यूरोपीय एशियाई यहां के अनेक देशों के लिए समस्या है। यहां के देशों में अब विदेशी जनता के लिए भी विद्रोही भावना जाग्रत हो रही है। उनमें यह विश्वास घर करता जा रहा है कि विदेशी स्थानीय धन का शोषण कर रहे है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण युगाण्डा से एशियाइयों के निष्कासन के रूप में देखा जा चुका है। यही बात अन्य अफ्रीकी देशों में भी यदि निकट भविष्य में दोहरायी जाए तो कोई आश्चार्य नहीं।

विदेशी प्रभावों से संरक्षण की समस्या –आज अफ्रीकी देशों की प्रमुख समस्या विदेशी प्रभावों से संरक्षण की है क्योंकि जब अफ्रीका का कोई देश किसी एक गुट में शामिल हो जाता है तो उससे अनेक समस्याऐं उत्पन्न हो जाती है। यहां पूँजीवादी एवं साम्यवादी दोनों ही अपना प्रभाव स्थापित करना चाहते है। यदि यहां के देश अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के दल–दल में फंस गए तो विकास की अन्य सम्भावनाऐं समाप्त हो जाती है।

साम्यवाद के प्रसार की समस्या –अफ्रीका महाद्वीप में साम्यवाद के लिए प्रायः सभी आवश्यक परिस्थितियां उपस्थित है जिनके कारण इस विचारधारा का निर्बाध प्रचार एवं प्रसार किया जा सकता है। यहां के लोग आर्थिक शोषण तथा साम्राज्यवादी दमन एवं आतंक के कटु अनुभव प्राप्त कर चुके है। साम्यवादी देशों द्वारा साम्राज्यवाद तथा उपनिवेशवाद का विरोध आर्थिक विकास के कार्यक्रमों की सफलता तथा पूँजीपति वर्ग को समाप्त कर शोषाण का अन्त व्यक्तियों के बीच समानता की स्थापना और जातीय भेदभाव की नीति की निन्दा, आदि साम्यवादी नीतियों के कुछ उदाहरण है जो अफ्रीकावासियों को अपनी और आकर्षित करने के लिए पर्याप्त है। रूस और साम्यवादी चीन द्वारा इस महाद्वीप के अनेक देशों के राष्ट्रीय आन्दोलनों में सक्रिय सहयोग प्रदान किया गया था।[11]

तटवर्ती व भीतरी क्षेत्रों के निवासियों के जीवन स्तर में अन्तर –अफ्रीकी तटवर्ती क्षेत्रों के निवासियों और भीतर के क्षेत्रों में रहने वाले निवासियों के आर्थिक और शैक्षणिक स्तरों में भी अन्तर है। तटवर्ती क्षेत्र निवासी यूरोपीय जातियों के सम्पर्क में आने के कारण अधिक शिक्षित और आर्थिक दृष्टि से अधिक सम्पन्न है। जैसे नाइजीरिया के तटवर्ती क्षेत्रो में रहने वाले लोग ईबो और योरूबा उत्तर में रहने वाले फूलानी लोगो से अधिक शिक्षित और आर्थिक दृष्टि से अधिक खुशहाल है। शहरी और ग्रामीण जीवन की भिन्नताओं ने समूहो, कबीलो और वर्गों में सामाजिक दूरी पैदा की है। इस असंतुलन ने राजनीतिक स्वरूप ग्रहण कर लिया है और प्रत्येक कबीला या समूह अपने लिए अधिक रियायते चाहता है जो विघटनकारी तत्वों को बढ़ावा देती है।[12]

सत्ता के औचित्य की समस्या –सभी राज्यों में शासक वर्गको सत्ता के औचित्य की समस्याओं का सामना करना पड़ता है परन्तु अफ्रीका के नव स्वतंत्र राज्यों में यह समस्या विशेष रूप से विद्यमान है। इसका मूल कारण यह है कि इन राज्यों में कोई संवैधनिक परम्पराऐं या संस्थाऐं विद्यमान नहीं रही और जो संस्थाऐं विद्यमान थी वे उपनिवेशी नमूने पर आधारित थी जो प्रजातांत्रिक न होकर साम्राज्यीय या सर्वसत्तावादी या पितृसत्तावाद पर आधारित है। सत्ता के उचित प्रयोग और आदेशो के औचित्य संबंधी प्रश्न यहा प्रायः उठते रहते है। इसका कारण यह है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद प्रजातांत्रिक संस्थाओं को अपनाने पर भी सेना का हस्तक्षेप बहुत अधिक रहा है और कम से कम 1/4 राज्यों में तो सैनिक या निरंकुश शासन आज भी विद्यमान है।

बढ़ती हुई आकांक्षाओं की समस्या –स्वतंत्रता प्राप्ति से अफ्रीका निवासियों की आकांक्षाऐं बहुत बढ़ गयी थी। वे अब अच्छे जीवन और अच्छे व्यवहार की मांग करने लगे थे। ये मांग जन समूह के सभी वर्गों की और से एक ही समय पर प्रस्तुत की गई। किसी एक वर्ग की मांग की पूर्ति दूसरे के लिए असंतोष का कारण बन गई। अतः इन राज्यों के शासकों के समक्ष सबसे पहले समस्यादल या सरकारी संस्थाओं के माध्यम से इन मांगों को प्रभावित एवं नियंत्रित करने की रही है परन्तु सरकार और दल दोनों ही इन्हें प्रवाहित एवं नियंत्रित करने में असफल रहे है। दूसरे, अभी तक जिन लोगों की उपेक्षा की जाती रही है और जो इस भावना से पीड़ित रहे है कि उन्हे कुछ नहीं समझा जाता रहा वे अब ''साझेदारी की मांग कर रहे है। तीसरे, नेताओं का उदय जिस सामाजिक पृष्ठभूमि'' से हुआ है वह प्रायः अस्पष्ट रही है। अतः उनका समाज के सभी वर्गों से सम्पर्क या संबंध ही नहीं था। चौथे ये राज्य विविध वर्गों की आय की गम्भीर भिन्नताओं से पीड़ित है। ये भिन्नताऐं ही आज समाज में विघटन पैदा करती है।

प्राचीन और आधुनिक संस्कृतिक के मूल्यों में अन्तर –अफ्रीका के राज्यों की प्राचीन संस्कृति कबीलवाद पर आधारित रही है। यह ऐसी व्यवस्था है जो लोगो को संगठित भी रखती रही है और सुरक्षित भी, परन्तु अफ्रीका में तीव्र गति से हो रहे परिवर्तनों, नवीन प्रजातांत्रित संस्थाओं की स्थापना, वफादारियों में परिवर्तन, समाजवादी व्यवस्था तथा नगरों के निर्माण एवं विकास ने कबीलावाद की एकता और अखण्डता पर प्रहार करना शुरू कर दिया है। नगरीकरण ने सामाजिक विघटन, जड़ रहितता और नगरों में लोगों की अत्यधिक भीड़ आदि की समस्याऐं पैदा की है।[13]

सामूहिक राश्ट्रीय चेतना का अभाव –अफ्रीकाके नव स्वतंत्र राज्यों में सामूहिक राष्ट्रीय चेतना का अभाव है। विद्वानों का मत है कि ''अफ्रीका के पास राज्य तो है परन्तु कोई राष्ट्र नहीं।'' इसका मूल कारण यह है कि अफ्रीका जातीय समूहो, कबिलाइयों या वर्गों की भक्ति केवल अपने नृजातीय समूहों कबीलो और वर्गों के प्रति है राष्ट्र या राज्य समूचे जनसमूह के प्रति नहीं।[14]

अफ्रीका में महाशक्तियों के हस्तक्षेप की समस्या –यूरोपीयसाम्राज्यवादी शक्तियों के अफ्रीका से पलायन के उपरान्त वहा शक्ति शून्यता आ गयी। इस अवसर का लाभ उठाकर संयुक्त राज्य अमेरीका अफ्रीका में पूँजीवाद और सोवियत संघ व चीन साम्यवाद के प्रसार का प्रयास करने लगे। अफ्रीका में सोवियत विदेश नीति की तीन विशेषताऐं रही– मुक्ति आन्दोलन का समर्थन, प्रगतिशील शक्तियों का समर्थन तथा साम्यवादी शासनों की स्थापना करना। सोवियत संघ ने औपनिवेशिक देशों के विरूद्ध अफ्रीकी देशों के स्वाधीनता संघर्ष का हमेशा समर्थन किया। वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रगतिशील कहे जाने वाले उन लोगों का समर्थन करता रहा जो स्वाधीनता के बाद अपने देशों की सरकारों से आर्थिक सुधारों की मांग कर रहे थे। एक प्रकार से यह स्वाधीन अफ्रीकी राष्ट्रों में सरकारों के विरूद्ध जन संघर्ष को प्रोत्साहन देना था। 1977–78 के सोमालिया–इथियोजिया संघर्ष में सोवियत संघ ने इथियोपिया का समर्थन किया। अंगोला के गृह–युद्ध के समय एम.पी.एल.ए. का समर्थन किया। मई 1971 में उसने मिस्र के साथ एक पन्द्रह वर्षीय पारस्परिक सुरक्षा समझौता किया और 1980 में सीरिया के साथ एक 20 वर्षीय संधि पर हस्ताक्षर किए। ऐसा कहा जाता है कि अफ्रीका में सोवियत संघ क्यूबा के माध्यम से सक्रिय रहा। मोजाम्बिक में सोवियत संघ और क्यूबा दोनो ही सक्रिय रहे। नामिबिया, रोडेशिया और दक्षिण अफ्रीका की वामपंथी शक्तियों को उनका समर्थन प्राप्त रहा। अल्जीरिया का धातुकर्मीय संयंत्र, नाइजीरिया का धातु कारखाना तथा इथियोपिया की अस्सब तेल रिफाइनरी सोवियत संघ की सहायता से बनी। अल्जीरिया, सियरा, लियोन, इथियोपिया, गिनी, नाइजीरिया, कांगों, तंजानिया तथा अन्य कई अफ्रीकी देशों में हजारों की संख्या में सोवियत इन्जिनियर, डॉक्टर, तकनीकी विशेषज्ञ, आदि विकास कार्यो में योगदान देते रहे। बौद्धिक स्तर पर अफ्रीका में साम्यवाद लाने के लिए वह बड़ी–बड़ी छात्रवृत्तिया देकर अफ्रीकी विद्यार्थियों को सोवियत विश्वविद्यालयों में स्थान देता था जहां उनके मस्तिष्क को साम्यवादी विचारधारा से अनुप्राणित करके उन्हें पुनः उनके देश भेज दिया जाता था।

अफ्रीका में अमेरीकी की दिलचस्पी काफी पुरानी है यह अफ्रीका के औपनिवेशिक मालिकों से कच्चा माल खरीदता था। अमेरीका, ब्रिटेन, फ्रांस आदि औपनिवेशिक शक्तियों का मित्र था अतः अब अफ्रीका में उसे एक उपनिवेशी पूँजीवादी शक्ति माना जाने लगा है। दक्षिण अफ्रीका तथा श्वेत लोगो का समर्थक होने के कारण अफ्रीकी नेता अमेरीकी जोड़–तोड़ से दूर रहना चाहते है। अमेरीका ने अफ्रीकी राज्यों के आपसी विवादों में भी हस्तक्षेप किया है। उसने सोमालिया को सहायता देकर उससे इथियोपिया पर आक्रमण कराया, अंगोला के गृह–युद्ध में उसने एफ.एन.एल.ए. का समर्थन किया। अमेरीका ने रोडेशिया तथा दक्षिणी अफ्रीका के गृह–युद्ध में उसने एफ.एन.एल.ए. का समर्थन किया। अमेरीका ने रोडेशिया तथा दक्षिणी अफ्रीका की रंगभेद समर्थक सरकारो का समर्थन किया तथा 30 अक्टूबर 1974 को संयुक्त राष्ट्र संघ से दक्षिण अफ्रीका को निष्काषित करने के प्रस्ताव पर ''वीटो'' का प्रयोग किया। इन सबसे अमेरीका की पहचान अफ्रीका के आन्तरिक शासन में हस्तक्षेप तथा रंगभेद का समर्थन करने वाले राष्ट्र के रूप में होने लगी।[15]

साम्यवादी चीन अफ्रीका को अपना विशेष क्षेत्र मानता है उसका उद्देश्य इस क्षेत्र में साम्यवाद का अधिकाधिक प्रसार करना और स्वयं इसका सर्वमान्य नेता बन जाना है। चीन अपनी क्रांति और पद्धति को अफ्रीका के अविकसित राष्ट्रों के लिए नमूने के रूप में प्रस्तुत करता है। उसका उद्देश्य अपनी प्रगति का उदाहरण देकर अफ्रीकी देशों की साम्यवादी पद्धति को अपनाने के लिए प्रेरित करना है। चीन ने अफ्रीकी देशो से न केवल व्यापारिक संबंध स्थापित किए अपितु उन्हें आर्थिक और तकनीकी सहायता भी दी है। चीन से सहायता पाने वाले प्रमुख देश है तजानिया, माली, गिनी, जाम्बिया और सोमालिया। चीन ने 6 वर्ष के अल्पकाल (1970–76) में 1276 मील लम्बे तंजाम रेलमार्ग का निर्माण करके अफ्रीकी राष्ट्रों में विशेष सम्मान अर्जित कर लिया। चीन अफ्रीकी राष्ट्रो को सोवियत क्यूबाई खतरे भी परिचित कराता रहा।

अफ्रीका देशों में बने विदेशी सैन्य अड्डे–अफ्रीकीसमाज में भावात्मक एकता की चेतना का अभाव, परिणामस्वरूप उत्पन्न आपसी राजनीतिक कलह, आर्थिक मजबूरिया एवं विश्व राजनीति की शतरंजी चाल के प्रति अफ्रीकी राजनेताओं की नासमझी के कारण बड़ी ताकतो ने इन देशो में अपने अखाड़े स्थापित कर लिये। अंगोला व इथियोपिया में सोवियत वर्चस्व का प्रतिनिधित्व क्यूबाई सेना के मार्फत होता रहा। पूर्वी जर्मनी के सैनिक सलाहकारों ने इथियोपिया व मोजाम्बिक में अपने अड्डे जमाए हुए है। सोवियत संघ ने लाल सागर में डेलहेक द्वीप पर अपना नाविक सैन्य अड्डा स्थापित कर लिया। फ्रांस की सेनाऐं महाद्वीप के कम से कम बीस देशों में तैनात है। चाड़ व लीबिया के संघर्ष में फ्रांस व अमेरीका ने चाड़ सुरक्षा के लिए भारी शस्त्र व तकनीकी सहायता मुहैया करवायी। सोवियत संघ व अमेरीका की साम्राज्यवादी आपाधापी की राजनीति ने इन नवजात अफ्रीकी देशो की सहज विकास के क्रम से गुजरने का अवसर ही नहीं दिया। चीन की सेना जिबूती में अपना पहला विदेशी सैन्य ठिकाना शुरू करने के लिए तैयार है। इससे पहले अमेरीका, जापान, फ्रांस भी जिबूती में अपना सैनिक अड्डा बना चुके है। जिबूती की लोकेशन उसे मिलिट्री बेस बनाने के लिए काफी उपयुक्त समझी जाती है। यह एक व्यस्त शिपिंग मार्ग पर पड़ने वाला देश है। इसके साथ ही अपने बाकी पड़ौसी देशों के मुकाबले यहां के राजनीतिक हालात स्थिर है। चीन का कहना है कि वह अपने मिलिट्री बेस के जरिए अफ्रीका और दक्षिण एशिया में शान्ति और मानवता कायम करने में मदद करेगा। चीन लगातार अफ्रीका में निवेश के स्तर को बढ़ा रहा है। साल 2015 में अफ्रीकी राष्ट्रों के साथ हुए शिखर सम्मेलन में चीन ने अफ्रीका के विकास के लिए 60 बिलियन डॉलर निवेश करने का वादा किया था। इसके साथ ही चीन अफ्रीका महाद्वीप का सबसे बड़ा ट्रेडिंग पार्टनर भी बन चुका है। वही अफ्रीका के जरिए चीन को कई प्राकृतिक संसाधन प्राप्त हो रहे है।[16]

जिबूती में चीन का पहला विदेशी सैन्य अड्डा अफ्रीकी देशों को कर्ज से पाटने के बाद चीन अब उन्हे अपना आर्थिक गुलाम बनाने की तैयारी में है। चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग ने 13 अफ्रीकी देशों की पहचान की है जहां चीन अपना मिलिट्री बेस खोल सकता है। चीन का दावा है कि जिबूती वाले बेस लॉजिस्टिक जरूरतों के लिए है चीन ने अभी तक 40 नेवल टास्क फोर्स को नियुक्त किया है। इस फोर्स ने 7000 से अधिक चीनी और विदेशी जहाजों को एस्कार्ट किया है। इसी की आड़ में चीन अफ्रीकी देशों में लगातार अपनी सैन्य उपस्थिति को बढ़ाता जा रहा है।

निष्कर्श –'परिवर्तन की हवा' ने अफ्रीका के अधिकांश क्षेत्र को उपनिवेशी शासन से मुक्ति दिलाकर उन्हें राजनीतिक दृष्टि से स्वतंत्र राज्य तो बना दिया है परन्तु उन्हें अपनी स्वतंत्रता एकता और अखण्डता को अक्षुण्ण रखने अपने आपको सक्षम बनाने और आधुनिक सभ्य विश्व में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए विविध आन्तरिक और बाह्य समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इनमें से कुछ समस्याऐं शताब्दियों के उपनिवेशी शासन और आर्थिक शोषण से उत्पन्न हुई है कुछ अफ्रीका में व्याप्त दरिद्रता, रोग, अनभिज्ञता और अज्ञान का परिणाम है। कुछ कबाइली परम्परा और अंध–विश्वास से उत्पन्न हुई है। कुछ प्राचीन और आधुनिक ग्रामीण और शहरी संस्कृति में द्वन्द्व के कारण उत्पन्न हुई है। कुछ राजनीतिक अस्थिरता, अपरिपक्वता, आन्तरिक विद्रोहों, विघटनकारी तत्वों एवं अफ्रीकी राज्यों में सीमा विवादों के कारण उत्पन्न हुई है। कुछ अफ्रीकी राज्यों में कुशल राष्ट्रीय प्रशासनिक सेवाओं के अभाव के कारण उत्पन्न हुई हे। कुछ बड़ी शक्तियों की पारस्परिक प्रतिद्वन्द्विता से उत्पन्न हुई है जो अफ्रीकी महाद्वीप में अपने ठिकाने बनाने के लिए विद्रोही नेताओं को प्रोत्साहन, आर्थिक और सैनिक सहायता एवं प्रशिक्षण देती है। इसके अतिरिक्त चीन ने वर्ष 2013 के बाद से पूरे अफ्रीकी महाद्वीप में अरबो डॉलर का निवेश किया है यह काम चीन ने न तो अफ्रीका की आर्थिक तरक्की के लिए किया और न

ही वहां के समाज को गरीबी से बाहर निकालने के लिए किया। चीन को मालूम है कि अफ्रीका में जमीन के नीचे ढेरो प्राकृतिक खनिज भंडार है। जिसे निकालना वहां के गरीब देशों की हैसियत के बाहर है ऐसे में चीन ने निवेश कर, अंगोला, मोजाम्बिक, कांगों, कैमरून, जाम्बिया, जिबूती समेत कई देशों को अपने कर्ज जाल में फंसा लिया और केन्या, दक्षिण अफ्रीका, यूगांडा समेत कई दूसरे देशों में तेजी से निवेश कर रहा है जिससे ये देश भी पूरी तरह से चीन के कर्ज जाल में फंस जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. चड्ढा पी.के. ''अन्तर्राष्ट्रीय संबंध'' आदर्श प्रकाशन चौड़ा रास्ता जयपुर, संस्करण, 1987, पृ. 532
2. चड्ढा पी.के. उपरोक्त, पृ. 532
3. फड़िया बी.एल. ''अन्तर्राष्ट्रीय संबंध'' साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा, संस्करण, 2002, पृ. 156
4. फड़िया बी.एल. उपरोक्त, पृ. 158
5. फड़िया बी.एल. उपरोक्त, पृ. 159
6. शर्मा प्रभुदत्त ''अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति'' कॉलेज बुक डिपो 83 त्रिपोलिया बाजार जयपुर, संस्करण, 1986, पृ. 434
7. जोशी आर.पी., अग्रवाल अमिता ''अन्तर्राष्ट्रीय संबंध'' शील संस जयपुर, संस्करण, 2000–2001, पृ. 145
8. चढ्डा पी.के. ''अन्तर्राष्ट्रीय संबंध'' आदर्श प्रकाशन चौड़ा रास्ता जयपुर, संस्करण, 1998–99, पृ.256
9. फड़िया बी.एल. उपरोक्त, पृ. 164
10. चड्ढा उपरोक्त, पृ. 257
11. फड़िया बी.एल. उपरोक्त, पृ. 164
12. चड्ढा उपरोक्त पृ. 256
13. चड्ढा उपरोक्त, पृ. 258
14. चड्ढा उपरोक्त, पृ. 256
15. फड़िया बी.एल. उपरोक्त, पृ. 162
16. www.bbc.com दिनांक 12.07.2017– जिबुती में चीन का पहला विदेशी सैन्य अड्डा